विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र] रजि. नं. १९१५६/७१ पोस्टल रजि. नं. MH/By – SOUTH -- 148

वर्ष ६ * बम्बई : बुद्धवर्ष २५२० * पोष पूर्णिमा [शक] दि. ५-१-७७ अंक ७

अपराधी और विपश्यना

भगवान सिंह साईवाल,
निरीक्षक उप-कारागृह, महानिरीक्षक
कामगार कार्यालय, जयपुर. (राज).

प्राचीन भारत में राजा प्रसेनजित की प्रजा बड़ी ही भयभीत थी. राजा से नहीं डाकू आतंक से। हां, उसके राज में एक बड़ा ही खूंखार, भयानक और निर्मम डाकू था। बात बहुत ही पुरानी है, आज से कोई पच्चीस सौ वर्ष पहले की। कहते हैं, वह डाकू आदमी की सूरत से घृणा करता था। दया–भाव का उसके पास क्या काम ? आदमियों को देखते ही उन पर गृद्ध की तरह झपटता था और बात की बात में उन्हें मार-मार कर उनकी अंगुलियां काट कर अपनी माला में पिरो लिया करता था। अंगुलियों की माला पहन कर जंगल में स्वच्छन्द रूप से घूमनेवाला वह जालिम डाकू, उन दिनों अंगुलिमाल के नाम से पुकारा जाता था। राजा प्रसेनजित की सेना भी अंगुलिमाल से भयभीत थी और उसे काबू करने में असफल रही। इतिहास बताता है कि अंगुलिमाल ने ९९९ मनुष्यों की हत्या की और उसके गले की माला में भी ९९९ अंगुलियां पिरोई हुई थीं किन्तु जब वह एक हजारवीं अंगुली अपनी माला में पिरोने के चक्कर में था, तभी सामने से आते हुए एक व्यक्ति पर वह झपटा परन्तु इस पर उसका खड्ग नहीं उठ सका, उसके कदम डगमगाने लगे। वह व्यक्ति आगे बढता था तो अंगुलिमाल के हर पीछे हटते हुए कदम के साथ-साथ उसका जंगलीपन दूर होता जा रहा था। हाथ से तलवार छूटी, तीर-धनुष फेंक दिए। अंगुलियों की माला को गले से निकाल फेंका। डाकू अंगुलिमाल उस शान्त सौम्य एवं करुणामय व्यक्तित्व के सामने स्थिर न रह सका। अंगुलिमाल झुक गया। उसके जंगलीपन में विवेक की तरंगें उठने लगीं। प्रकृति का नियम उसकी समझ में आने लगा, ऋतु को पहचाना और शुद्ध धर्म को जीवन में धारण किया। अवश्य ही अंगुलिमाल के जंगलीपन को उस महामानव ने विपश्यना के धर्म-जल से धोकर उसे निर्मल बनाया होगा।

धम्म वाणी

यो च पुब्बे पमज्जित्वा पच्छा सो नप्पमज्जति।
सो मं लोकं पभासेति अब्भा मुत्तोव चन्दिमा॥

—धम्मपद–१३/६.

जो पहले प्रमादवश अपराध किए होने पर भी अब साधना द्वारा प्रमाद-विहीन रहना सीखकर अपराध करना छोड़ चुका है, वह काले बादलों से उन्मुक्त हुए चन्द्रमा की भांति इस दुनियां को प्रकाशमान करता है।

इतिहास की सच्चाई है कि वह महामानव भगवान बुद्ध ही थे जिन्होंने न केवल विपश्यना साधना से अपनी बोधि को जगाया वरन् अंगुलिमाल जैसे राक्षस और आम्रपाली जैसी वेश्या सहित असंख्य गुमराह नर-नारियों को शुद्ध धर्म की दीक्षा देकर "विपश्यना साधना" के माध्यम से उन्हें "स्व" का साक्षात्कार कराके जीना सिखाया। न जाने विपश्यना साधना के अभ्यास से उन दिनों मे कितने ही अंगुलिमाल जैसे चोर-डाकू और हत्यारों ने अपने अन्तर की आग बुझा कर शेष जीवन सुख-शांति से बिताया होगा। इस तथ्य को तो इतिहास के पन्ने ही उजागर करेंगे लेकिन मैं इस जमाने की बात आगे करता हूं—

"विपश्यना के बारे में तो इस विपश्यना पत्रिका के पिछले अनेक अंकों में विस्तार से समझाया और बताया जा चुकाया है। हम सभी विपश्यना के रहस्य, महत्व और सार को जान चुके हैं और अब तो विपश्यना जीवन की शैली बन चुकी है। अतः मैं अपनी बात पर आना चाहता हूं और अंगुलिमाल की कहानी के अन्त तक आपको ले जाना चाहूंगा।

शिविर नम्बर ११२ मेरा प्रथम शिविर था जो दिनांक-

२१–५ ७५ से ३१-५--७५ तक समुद्र के किनारे रमणीय वातावरण में नारगोल (गुजरात) में लगा था। मैं राजस्थान सरकार की ओर से विपश्यना साधना शिविर में भाग लेने गया था। नारगोल के लिए प्रस्थान करने से पूर्व मन में उत्कंठा जागी कि इस साधना के बारे में कुछ तो पता चले और इसलिए मैंने उन महानुभाव से संपर्क किया जो इस साधना का अभ्यास करते आये थे। उन्होंने इस साधना की ऊपरी रूप-रेखा से मुझे परिचित कराया और बताया कि विशेष तो शिविर में भाग लेने पर गुरुजी ही बतायेंगे। उन महानुभाव से वार्ता के दौरान जो प्रेरणा मुझे मिली उसका तत्काल प्रभाव तो यह पडा कि मैं अपने सभी पुराने लेपों को जयपुर रेल्वे स्टेशन के प्लेटफार्म पर ही उतार कर ट्रेन में बैठा और जब शिविर में पूज्य गुरुजी के प्रवचन कानों में पडने लगे तो जयपुर में उस महानुभाव के द्वारा मिली प्रेरणा क्षण-क्षण पुष्ट होने लगी, गुरुदेव के प्रति श्रद्धा बढने लगी ओर **'विपश्यना साधना'** में मन रमने लगा।

शिविर समाप्ति के बाद एक नया जीवन लेकर जयपुर लौटा तों एकाएक अंगुलिमाल का ध्यान आया और उसी समय ख्याल आया कि वैसे अनेक अंगुलिमाल तो हमारे बाड़ों में बंद हैं। बडे दुःखी हैं बेचारे, जल रहे हैं राग-द्वेष की ज्वाला में भीतर ही भीतर। कैसे इनका दुःख दूर हो? मैं केन्द्रीय कारागृह, जयपुर के बंदियों की बात कर रहा हूं, जहां अधिकतर बंदी डकैती, लूट-मार, व हत्याओं के आरोप मे आजन्म कारावास की सजा भुगत रहे हैं। राजस्थान सरकार के शासन तंत्र में इन बंदियों के प्रति करुणा और प्रेम जागा और लगभग पच्चीस सौ वर्ष बाद फिर इस बार एक साथ बहुत-से अंगुलिमालों पर विपश्यना का धर्म–जल छिडकने की कल्याणकारी योजना को त्वरित गति से क्रियात्मक रूप दिया गया।

हमारे अंगुलिमाल अपने शरीर और चित्त–शोधन के लिए तैयार हुए। राजस्थान विश्व विद्यालय के समाज–शास्त्र विषय के आचार्यों द्वारा शिबिर में बैठने से पूर्व तथा पश्चात् प्रत्येक साधक बंदी का साक्षात्कार करवाया—शोध-कार्य के लिए। तथा चिकित्सा अधिकारी द्वारा भी सभी साधक बंदियों के स्वास्थ्य की परीक्षा करायी गयी। शोध कार्य के लिए ही बंबई से कुमारी कुसुम शाह भी आईं जो कारागृह के अन्दर ही दस दिनों तक अंगुलिमालों के बीच रहीं। कारागृह के उस भाग में, जिसे शिविर लगाने के लिए चुना गया था, कुछ दिनों पहले से वहां पावन तरंगे तैरने लगीं। जब शिविर आरंभ हुआ तो शाम के समय प्रवचन मे बाहर से आनेवाले सज्जन सिविर-स्थल को देखकर आश्चर्य करते थे और उन्हें सन्देह होता था कि क्या वे सचमुच कारागृह में आये हैं। एक महान संत के आगमन के लिए जैसा वातावरण बनता है, ठीक वैसा ही वातावरण उपस्थित था जब ..

दिनांक २७-९-७५ से केन्द्रीय कारागृह, जयपुर में दस दिन का ऐतिहासिक शिविर लगा। "विपश्यना साधना" का यह ११७ वां शिविर था जो पूज्य गुरुदेव श्री गोयनकाजी के द्वारा संचालित किया गया था। इसमें १०४ पुरुष बंदी व १० महिला बंदियों न भाग लिया था। मैं लगातार इस शिविर के संपर्क में रहा। इस शिविर की तैयारी को जहां मैंने समीप से देखा था वहां शिविर समाप्ति के बाद भी कारागृह के वातावरण और साधक बंदियों की गतिविधियों को मैं देखता आया हूं। दिनांक ७-१०-७५ को शिविर समाप्त हुआ। साधकों के जो मुर्झाए हुए चेहरे मैंने दिनांक २७-९-७५ से पहले देखे थे, वे अब गोल व प्रफुल्लित दिखाई दे रहे थे। इन १० दिनो की विपश्यना ने उनके अंदर के अंगुलिमाल को मार कर उन्हे नया जन्म दिया था। सभी कृतज्ञ और आभारी थे, विपश्यना साधना की विधि ग्रहण करके, जिसके द्वारा उन्हे बंधन में सुख-शांति भोगने की कला हाथ लगी। किन्तु पूज्य गुरुदेव के प्रति आभार और कृतज्ञता प्रकट करने के लिए उन्हे विपश्यना साधना नियमित रूप से प्रातः एवं सायं एक घंटा अभ्यास करना ही होगा। अभ्यास से ही शुद्ध धर्म का दीप मानस में प्रज्वलित होगा।

उपरोक्त शिविर के तुरंत बाद दिनांक ७-१०-७५ से शिविर नं ११८ राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर के कस्तुरबा छात्रावास के प्रांगण में लगा, जिसमे फिर मैंने भाग लिया और नारगोल शिविर के बाद से मेरी साधना के अभ्यास को बल मिला। इस शिविर में भी बंदी साधक शाम गुरुजी के प्रवचन सुनने के लिए रोज चार किलोमीटर दूर केन्द्रीय कारागृह से आया करते थे। प्रवचन में समाज के और भी अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति आते थे जो इन बंदी साधकों के सद्-व्यवहार से बड़े ही प्रभावित थे।

शिविर नं. ११८ की समाप्ति के साथ मैंने क्या पाया और क्या जाना है, लेखनी के द्वारा कैसे बताऊं? बस अभी तो ऐसा लगता है जैसे पहले से ही एक दुनिया अंदर बसी है जिसे जानने के लिए पवित्रता की सीढी लगाकर धीरे-धीरे मैं उतर रहा हूं! बहुत गहरी दुनिया है जिसमें साधना अभ्यास की निरंतरता ही गहराइयों में ले जायेगी। मन बदला है, हल्कापन भी आया है, रोग भी जाता नजर आया है, संतुष्टि के भाव बनने लगे हैं और सबसे बडी बात तो यह बनी है कि मन की प्रसन्नता अपना क्षेत्र बहुत व्यापक बनाने में लगी है और भीतर की नजर पैनी होने लगी है। समता का जीवन जीने की आदत पड़ गई है किन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि मेरे जीवन में तनाव, खिंचाव, चिंताएं शारीरिक दुख तथा मन में विकार पैदा ही नहीं होते हैं। यह सब कुछ होता तो है लेकिन विपश्यना साधना के अभ्यास से ये टिक नहीं पाते। मन समस्याओं से पलायन में सहयोग नहीं देता है वरना उनका कारण तलाश करके समाधान कर शुद्ध चित्त वृत्तियों का सृंजन करता है।

उधर बंदी साधकों के उद्गार और अनुभव 'विपश्यना साधना' के संबंध में जो सामने आये हैं, यह सचमुच कीर्तिमान है। सब पर समान प्रभाव पडा है साधना का। मेरा विश्वास है ये बंदी

साधक जब भी उन्मुक्त होंगे, ऊंची-ऊंची दीवारों के बाहर आयेंगे तो अंगुलिमाल की भांति ये भी अपना शेष जीवन विपश्यना को जीवन की शैली बनाकर सत्य, प्रेम और करुणा की त्रिवेणी बहाते हुए समाज-सफाई के कार्य में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त कर सकेंगे। बंदी साधकों की तथा अन्य बंदियों की मागें हैं, कि विपश्यना साधना के शिविर कारागृहों में वर्ष में एक-दो बार लगते ही रहने चाहिए ताकि अधिक से अधिक बंदी लाभान्वित हो सकें ।

राजा प्रसेनजित की सेना अंगुलिमाल को चाहे काबू न कर पायी हो पर हमारे आज के अंगुलिमालों को सही दिशा दिखाने के लिए राजस्थान के आरक्षी विभाग के अनेक अधिकारी और थानेश्वरों (इन्चार्ज पुलिस स्टेशन पूज्य गुरुजी के शब्दों में) को भी राजस्थान पुलिस अकादमी, जयपुर में दिनांक २७-१-७६ से ६-२-७६ तक एक शिविर लगाकर 'विपश्यना साधना का अभ्यास कराया गया था जिसके परिणाम भी उत्साहवर्धक निकले हैं। मेरा विश्वास हैं इसी प्रकार भविष्य में सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर विपश्यना साधना के शिविर राजस्थान में समय-समय पर भिन्न-भिन्न स्थानों पर तथा विभागों में लगते रहे तो राजस्थान में कारागृहों के बाहर भी अपराध और अपराधी की समस्या को हल करने में, उल्लेखनीय सफलता मिल सकेगी और प्रदेश का हर अंगुलिमाल सभ्य नागरिक बन विशुद्ध धर्म का जीवन बिताने लगेगा ।

धर्म जीवन जीने की कला

लेखक : **सत्य नारायण गोयनका**

प्रकाशक : **सयाजी उ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट, २०, शहीद भगतसिंह मार्ग, बम्बई — ४०० ०२३.**

पृष्ठ : ११६ मूल्य : पांच रुपया

भारतीय संस्कृति में ध्यान की परंपरा अति प्राचीन हैं। श्रमण और ब्राम्हण दोनो परंपराओं में अध्यात्म–साधना में ध्यान पर अधिक बल दिया गया हैं। जैन वाङ्मय में श्रमणों के लिए प्रतिदिन आठ पहर में से दो पहर ध्यान करने का विधान हैं। बौद्ध परम्परा में भी ध्यान पर अनेक प्रयोग किए हैं। विपश्यना-ध्यान पद्धति बौद्ध परम्परा की हैं। परन्तु भारत में बौद्ध धर्म के विदेश गमन के साथ विपश्यना पद्धति भी अपने शुद्ध रूप में नहीं रही, परन्तु बर्मा में वह आज भी शुद्ध रूप में प्रचलित है। सत्यनारायणजी गोयनका, जो बर्मा के एक माने हुए उद्योगपति हैं, ने 'सयाजी ऊ बा खिन' से इस पद्धति को सीखा और आज कल वे भारत के विभिन्न नगरों में ध्यान शिविरों का आयोजन करके जन-जन में प्रसार कर रहे है।

विपश्यना-ध्यान की पार्श्व-भूमिका को समझने के लिए गोयनकाजी ने प्रस्तुत पुस्तक में इस बात को स्पष्ट कर दिया हैं, धर्म, एक कला हैं और जीवन जीने लिए सबसे श्रेष्ठ और सुन्दर कला हैं। इस कला को जान लेने वाला व्यक्ति सुख-शांति पूर्वक निर्द्वन्द जीवन जीता हैं। लेखों के साथ गोयन्काजी के दोहे भी दे दिए हैं, जो साधक के लिए बहुत ही उपयोगी है।

पुस्तक के भाव तो सुन्दर हैं ही, पर भाषा भी सरल प्राञ्जल हैं। भाव भाषा, शैली, छपाई आदि सब दृष्टि से पुस्तक सुन्दर एवं उपयोगी हैं।

— साध्वी चेतना, 'साहित्य सुधाकर'

[श्री. अमरभारती, दिसम्बर १९७६ के 'साहित्य-समीक्षा' खण्ड से साभार उद्धृत]

आगामी शिबिर

पूज्य गुरुजी श्री सत्यनारायणजी गोयन्का द्वारा संचालित 'विपश्यना' साधना शिबिरो के आगामी कार्यक्रम निम्न प्रकार है :—

शिबिर क्रमांक १३१	जयपुर (केन्द्रीय कारागृह) सुरक्षित	दि. ४-१-१९७७ से १५-१-७७ तक (हिन्दी)
,, ,, १३२	बोधगया	,, १९-१-७७ से ३०.१.७७ तक (अंग्रेजी)
,, ,, १३३	इगतपुरी	,, ११.२.७७ से २१.२.७७ तक (हिन्दी)
,, ,, १३४	,,	,, २.३.७७ से १३.३.७७ तक (अंग्रेजी)

१० फरवरी '६६ से ३१ मई' ६६ तक इगतपुरी में लगातार शिबिरों का आयोजन किया जायगा, जिसकी सूचना आगामी अंक में प्रकाशित की जायगी — मंत्री

व्यवस्थापक :
श्री रामप्रताप यादव
विपश्यना विश्व विद्यापीठ धम्मगिरी, इगतपुरी ४२२४०३
जिला नासिक (महाराष्ट्र)

विशेष सूचना

१) पूज्य गुरुजी द्वारा लिखित 'धर्म जीवन जीने को कला' संपादक रिषभदास राका प्रकाशित हो चुकी है, जो भी साधक भाई-बहन यह पुस्तक मंगाना चाहें वे कृपया निम्न पते पर पांच रुपय का मनी आर्डर भेजकर मंगा सकते हैं।

श्री दयानंदजी अडूकिया ३५० कालबादेवी रोड, बम्बई– २.

२) २५ से ५० पुस्तक एक साथ खरीदने पर कमीशन २०% दिया जायगा ।
५० से १०० ,, ,, ,, ,, ३०% ,, ,,
१०० या इससे अधिक ,, ,, ,, ४०% ,, ,,

नोट : व्यवस्थापक :—

१) कृपया साधना शिबिर में शामिल होने से पूर्व शिबिर व्यवस्थापक के पास आप अपना नाम रजिस्टर करा लें.

२) अंग्रेजी शिबिरों में हिन्दी प्रवचन सुनने हेतु हिन्दी टेप की एवं हिन्दी शिबिरों में अंग्रेजी प्रवचन सुनने हेतु अंग्रेजी टेप की सुविधा उपलब्ध रहेगी.

३) शिबिर में भाग लेने वाले साधक भाई बहन अपना बिस्तर, दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुएं व टार्च, आसन आदि अपने साथ लाएं.

४) 'विपश्यना विश्व विद्यापीठ' के नियम सामान्य शिबिरों के मुकाबले अधिक कड़े हैं. जैसे सब साधको के लिये पूर्ण मौन, पुराने साधकों के लिए अष्टशील, साधक-साधिकाओं का नितांत पृथक्करण, विपश्यना साधनाविधि का अनन्य निष्ठाजन्य अभ्यास आदि आदि. विद्यापीठ के कड़े नियमों का पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए.

—**मधु काबरा**
मानद मंत्री

तार : अनुसंधान फोन नं. २९६१३१

मेसर्स तोशनीवाल ब्रदर्स प्रा० लि०

१९८, जमशेदजी टाटा रोड, चर्चगेट, बम्बई – ४०००२०.

की मंगलकामनाओं सहित —

मेसर्स तापड़िया टूल्स लि०

सिल्वेस्टर बिल्डिग, ४ था माला, २०, ओल्ड कस्टम हाऊस रोड, फोर्ट, बम्बई – ४०० ०२३. फोन न. २६३७८८

की मंगलकामनाओं सहित —

दोहे धर्म के

धन्य धन्य गुरुदेवजी, धन्य बुद्ध भगवान !
शुद्ध धर्म ऐसा दिया, होय जगत कल्याण ॥
संपदाय का जाति का, जहां भेद ना होय ।
जो सब का, सबके लिए, शुद्ध धर्म है सोय ॥
हिन्दू हूं या बौद्ध हूं, मुस्लिम हूं या जैन ।
शुद्ध धर्म का पथिक हूं, रहूं सुखी दिन रैन ॥
शील धरम पालन करूं, कर समाधि अभ्यास ।
निज प्रज्ञा जाग्रत करूं, करूं दुखों का नाश ॥
पाप पंथ पर भटकते, बीता कितना काल ।
अब तो पाया धर्म पथ, जीवन हुआ निहाल ॥
हित सुख छीना जगत का, बना अंगुली माल ॥
धन्य धर्म ऐसा मिला, सुधरी चाल कुचाल ॥

दूहा धरम रा

पतित पावना साधना जन जन करै निहाल ।
दुरजन सूं सज्जन हुवै, खूनी अंगुलिमाल ॥
जद जद मन मैलो हुवै, तो हि हुवै अपराध ।
इब अन्तर निरमल हुयो, सहज छुट्यो अपराध ॥
कर्‌यो अंमगल ही सदा, मन को रहयो गुलाम ॥
मिली सुमंगल साधना, मन पर लगी लगाम ॥
दुस्करमां रै पंथ पर, खोया होस हवास ।
होस जग्यो हैं धरम सूं, टूट्या दुख का पास ॥
बीत्यो जीवन पाप को, काल कोठरी बंद ।
धरम मिल्यो तो मुक्ति को, आभै झुलक्यो चंद ॥
दुराचार दुस्सील री, बीती काली रात ।
सदाचार रो सील रो, उजलो उग्यो प्रभात ॥

सयाजी ऊ बा खिन ममोरियल ट्रस्ट के लिए संपादक मुद्रक प्रकाशक : **मधु काबरा** सिलेस्टर बिल्डिंग २० शहीद भगतसिंह मार्ग, बम्बई २३.
टेलीफोन : २६ ९४ ११ मुद्रण स्थान : **इन्टर नैशनल प्रिंटींग प्रेस**, गायवाडी, गिरगांव रोड, बम्बई – ४०० ००४.
विज्ञापन : आधा पृष्ठ ४००/- चौथाई पृष्ठ २००/- वार्षिक शुल्क रु. ५/- आजीवन ५१/-

"विपश्यना"
रजि० नं. १९१५६/७१.

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट,
२०, शहीद मगतसिंह मार्ग,
फोर्ट, बम्बई - ४०० ०२३.

To,